चम्बयाली गद्दी जनजातीय लोक–संस्कृति के अन्तर्गत अनिबद्ध लोक–गीतों में भावाभिव्यक्ति

Dr. Sanjeev Kumar
Assistant Professor in Music, Govt. College Chuvadi, Chamba

हिमाचल प्रदेश के उत्तर–पश्चिम सीमा में चम्बा ज़िला अवस्थित है। इस ज़िले का भरमौर–क्षेत्र गद्दी जनजाती बहुल क्षेत्र है। इसी मूल स्थान से उठकर इस जनजाति के कई परिवार प्रदेश के चम्बा, कांगड़ा तथा जम्मू आदि निचले मैदानी क्षेत्रों में आ बसे हैं। सांस्कृतिक दृष्टि से यह जनजाति, चाहे वो कहीं भी बस रही हो, मूतलतः एकरूप है ओर इनकी यही सांस्कृतिक विरासत देश–प्रदेश में अपना विशिष्ट स्थान बनाए हुए है। लोक–संगीत इस विरासत का एक अमूल्य पहलू है। समाज की सांस्कृतिक क्रियाओं–प्रक्रियाओं से लेकर मनोरंजन के विभिन्न अवसरों में यहां के पारम्परिक संगीत की अहम भूमिका रहती है। विवेच्य लोक–संगीत में निबद्ध गीत प्रकारों का जितना महत्व है, उतना ही अनिबद्ध लोक–गीतों का भी है। बल्कि भावाभिव्यक्ति के दृष्टिकोण से अनिबद्ध लोक–गीत अपेक्षाकृत ऊँचे आयाम प्रस्तुत करता प्रतीत होता है। विवाह के शुभ अवसर पर स्त्रियों द्वारा अनेक अनिबद्ध लोक–गीतों की परम्परा विद्यमान है। इसी अवसर का एक गीत इस प्रकार हैः–

गीत के बोल

सांदी खेरै कोठै जी बामणा, अबल सजायां हो

स्वरलिपि

प़	नि़प़	सा	सा	–	–	(सा)रेरेगरे	सा	सानि़	नि़साग
सां	दीऽ	खे	रै	ऽ	ऽ	ऽऽऽऽ	को	ठेऽ	जीऽऽऽ

रेसा	(सा)नि़	ऽ	प़	–	प़	नि़प	(प)सा	सा	सा	(सा)रेरेगरे	सा	सानि़प़	प़	प़	प़
बाऽ	म	ऽ	णा	ऽ	अ	बऽ	ऽ	ल	ऽ	बऽऽऽ	णा	यॉंऽऽ	हो	ऽ	ऽ

हिन्दी रूपांतर

शान्ति (हवन) के कोठे (मण्डप) को, हे पुरोहित! अच्छी तरह से सजाना।

विवेच्य समाज की एक लोक–गाथा, जिसमें एक नववधू की बसोआ (वैशाखी) अवसर पर मायके की याद में उसकी हार्दिक पीड़ा व्यक्त हुई है, प्रस्तुत हैः–

लोकगाथा के बोल

आया बसोआ माए पंजे–सत्ते
मेरे घरे रा सादा न आया हो–2
पिंदड़ी ता पिंदड़ी माए अप्पू खाए
मुंजो पिंदड़ी रै पट्ठै भेजैं हो–2

स्वरलिपि

ग़प़	प़	प़ध़	सारे	गप	पम	धपग	ग	गरे	गरेंसा	सा	सा	सा	गग
आऽ	या	ऽब	सोऽ	आऽ	माऽ	एऽऽ	पं	जेऽ	सऽऽ	ऽ	ते	ऽ	मुंजो
रे	मग	रेसानि़	ध़	ध़	सानि़	धप़ग़	ग़	प़	साध़	सा	सा	सा	सा
घ	रेऽ	राऽऽ	सा	ऽ	दा	नाऽ	ऽ	आ	ऽ	ऽ	हो	ऽ	ऽ

हिन्दी रूपांतर

पांच–सात दिनों में बसोआ (बैशाखी) त्यौहार आने वाला है किन्तु हे माँ! तूने मुझे बुलाने किसी को क्यों नही भेजा। पिंदड़ी (स्थानीय व्यंजन) भले ही स्वयं खा लेना किन्तु उसके पत्ते (जिसमें ढक कर व्यंजन बनाया जाता है) मुझे भेज देना। उपर्युक्त स्वरलिपि को आजकल ताल दीपचंदी में निबद्ध कर भी गाया जाने लगा है।

दूर पर्वतों और घने जंगलों, चरागाहों में घास काटते अथवा पशु चराते समय स्त्रियों द्वारा अनेकानेक मनोभावों के लोक–गीत गाने की परम्परा भी प्रस्तुत समाज में विद्यमान है। यह लोकगीत प्रायः दो पक्तियों का बना होता है और हर द्विपदी एक स्वत्रंत भाव लिए होती है। हाँ स्वरलिपि एक समान रहती है। एक लोक गीत इस प्रकार हैः–

गीत के बोल

1. पारै ता पारै जांदीऐ बो मणिऐं उआरै हेरैं ओ
   तेरे दरसण पाणै, तेरे दरसण पाणै ओ
2. तेरा ता जिबलू वो माणुआ तेरी मौऐ खाया ओ
   आऊं ता नार बगानी, आऊँ ता नार बगानी ओ
3. डाली ता खेरै पखरू वो जीदैं उड़ी जालै ओ
   डाल़ी झूरली नमाणी, डाली झूरली नमाणी ओ

हिन्दी रूपांतर

1. दूर (राह में) जाती हे औरत! इस तरफ देख लो तुम्हारे दर्शन–भर करने हैं।
2. (औरत) तेरी माँ तेरी जीभ खाए जो तूने मुझ पराई नार को ऐसे अपशब्द कहे हैं।
3. डाली पर बैठे पक्षी उड़ जाते है और डाली असहाय होकर वहीं झूलती रहती है।

स्थानीय लोक संगीत के अन्तर्गत अनिबद्ध लोक–गीतों के ऐसे ही अनेको उदाहरण प्रस्तुत किए जा सकते हैं जो अत्यन्त भावपूर्ण हैं। स्थायी भाव, संचारी, उद्दीपन आदि मानदण्डो में भले ही यह गीत किसी रस की निष्पत्ति न कर सकें, किन्तु नैसर्गिक रूप में यह लोक–गीत–लोक गायक अथवा गायिका के कण्ठ से अवसर विशेष पर पर्वत, नदियों, घने जंगलों, घाटियों, पशु–पक्षियों के बीच जब भावातिरेक में प्रस्फुटित होते हैं तो बड़े–बड़े फर्राटेदार तानबाज और कवि भी सुध–बुध खो बैठते हैं। आज के युग में लोक–संगीत की इस अमूल्य धरोहर को संजोए रखने की परम आवश्यकता है और सुधी संगीतकारों का परम कर्त्तव्य।